

णमोकार मंत्र और मनोविज्ञान

(स्व०) डा० नेमीचंद्र शास्त्री

आरा

णमोकार-मंत्र का अर्थ

वैदिक धर्मानुयायियों में जो ख्याति और प्रचार गायत्री मन्त्र का है, बौद्धों में त्रिशरण मन्त्र का है, जैनो में वही ख्याति और प्रचार णमोकार मन्त्र का है। समस्त धार्मिक और सामाजिक कृत्यों के आरम्भ में इस महामन्त्र का उच्चारण किया जाता है। जैन-सम्प्रदाय का यह दैनिक जाप मन्त्र है। इस मन्त्र का प्रचार तीनों सम्प्रदायों—दिगम्बर, श्वेताम्बर और स्थानकवासियों में समान रूप से पाया जाता है। तीनों सम्प्रदाय के प्राचीनतम साहित्य में भी इसका उल्लेख मिलता है। इस मन्त्र में पाँच पद, अट्ठावन मात्रा और पैंतीस अक्षर हैं। मन्त्र निम्न प्रकार है :

णमो अरिहंतार्ण, णमो सिद्धार्ण, णमो आइरियाणं ।

णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वासाहूणं ॥

स्वर और व्यंजनों का विश्लेषण करने पर प्रतीत होता है कि “णमो अरिहंतार्ण, ६ व्यंजन; णमो सिद्धार्ण, ५ व्यंजन; णमो आइरियाणं, ५ व्यंजन; णमो उवज्झायाणं, ६ व्यंजन; णमो लोए सव्वासाहूणं, ८ व्यंजन, इस प्रकार इस मन्त्र में कुल ६ + ५ + ५ + ६ + ८ = ३० व्यंजन हैं। इस मन्त्र में सभी वर्ण अजन्त हैं, यहाँ हलन्त एक भी वर्ण नहीं है, अतः ३५ अक्षरों में ३५ स्वर मानने चाहिए। पर वास्तविकता यह है कि ३५ अक्षरों के होने पर भी वहाँ स्वर ३४ हैं। इस प्रकार कुल मन्त्र में ३५ अक्षर होने पर भी ३४ ही स्वर रहते हैं। कुल स्वर और व्यंजनों की संख्या ३४ + ३० = ६४ हैं। मूल वर्णों की संख्या भी ६४ ही है। प्राकृत भाषा के नियमानुसार अ, इ, उ, और ए मूल स्वर तथा ज झ ण त द ध य र ल व स और ह—ये मूल व्यंजन इस मन्त्र में निहित हैं। अतएव ६४ अनादि मूल वर्णों को लेकर समस्त श्रुतज्ञान के अक्षरों का प्रमाण निकाला जा सकता है।

णमोकार मन्त्र के जाप करने की विधि

णमोकार मन्त्र का जाप करने के लिए सर्वप्रथम आठ प्रकार की शुद्धियों का होना आवश्यक है। १. द्रव्यशुद्धि—पंचेन्द्रिय तथा मन को वश कर कषाय और परिग्रह का शक्ति के अनुसार त्याग कर कोमल और दयालुचित्त हो जाप करना। यहाँ द्रव्यशुद्धि का अभिप्राय पात्र की अन्तरंग शुद्धि से है। जाप करने वाले को यथाशक्ति अपने विकारों को हटाकर ही जाप करना चाहिए। अन्तरंग से काम, क्रोध, लोभ, मोह, मान, माया, आदि विकारों को हटाना आवश्यक है। २. क्षेत्रशुद्धि—निराकुल स्थान, जहाँ हत्ला-गुत्ला न हो तथा डाँस-मच्छर आदि बाधक जन्तु न हों। चित्त में क्षोभ उत्पन्न करने वाले उपद्रव एवं शीत-उष्ण की बाधा न हो, ऐसा एकान्त निर्जन स्थान जाप करने के लिए उत्तम है। घर के किसी एकान्त प्रदेश में जहाँ अन्य किसी प्रकार की बाधा न हो और पूर्ण शान्ति रह सके, उस स्थान पर भी जाप किया जा सकता है। ३. समय शुद्धि—प्रातः, मध्याह्न और सन्ध्या समय कम से कम ४५ मिनट

तक लगातार इस महामन्त्र का जाप करना चाहिए। जाप करते समय निश्चिन्त रहना एवं निराकुल होना परम आवश्यक है। ४. आसनशुद्धि—काष्ठ, शिला, भूमि, चटाई या शीतलपट्टी पर पूर्वदिशा या उत्तर दिशा की ओर मुँह करके पद्मासन, खड्गासन या अर्धपद्मासन होकर क्षेत्र तथा काल का प्रमाण करके मीनपूर्वक इस मन्त्र का जाप करना चाहिए। ५. विनयशुद्धि—जिस आसन पर बैठकर जाप करना हो, उस आसन को सावधानीपूर्वक ईयापथ शुद्धि के साथ साफ करना चाहिए, तथा जाप करने के लिए नम्रतापूर्वक भीतर का अनुराग भी रहना आवश्यक है। जब तक जाप करने के लिए भीतर का उत्साह नहीं होगा, तब तक सच्चे मन से जाप नहीं किया जा सकता। ६. मनःशुद्धि—विचारों की गन्दगी का त्याग कर मन को एकाग्र करना, चंचल मन इधर-उधर न भटकने पाये इसकी चेष्टा करना, मन को पूर्णतया पवित्र बनाने का प्रयास करना ही इस शुद्धि में अमिप्रेत है। ७. वचन शुद्धि—धीरे धीरे साम्यभाव पूर्वक इस मन्त्र का शुद्ध जाप करना अर्थात् उच्चारण करने में अशुद्धि न होने पाये तथा उच्चारण मन-मन में ही होना चाहिए। ८. कायशुद्धि—शौचादि शंकाओं से निवृत्त होकर यत्नाचार पूर्वक शरीर शुद्ध करके हलन-चलन किया से रहित हो जाप करना चाहिए। जाप के समय शारीरिक शुद्धि का ध्यान रखना चाहिए।

इस महामन्त्र का जाप यदि खड़े होकर करना हो, तो तीन-तीन श्वासोच्छ्वास में एक बार पढ़ना चाहिए। एक सौ आठ बार के जाप में कुल ३२४ श्वासोच्छ्वास सौस लेना चाहिए। इसके जाप करने की कमल जाप, हस्तांगुली जाप और माला जाप—तीन विधियाँ हैं।

मनोविज्ञान और णमोकार मन्त्र

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह विचारणीय प्रश्न है कि णमोकार मन्त्र का मन पर क्या प्रभाव पड़ता है? आत्मिक शक्ति का विकास किस प्रकार होता है, जिससे इस मन्त्र को समस्त कार्यों में सिद्धि देने वाला कहा गया है। मनोविज्ञान मानता है कि मानव की दृश्य क्रियाएँ उनके चेतन मन में और अदृश्य क्रियाएँ अचेतन मन में होती हैं। मन की इन दोनों क्रियाओं को मनोवृत्ति कहा जाता है। साधारणतः मनोवृत्ति शब्द चेतन मन की क्रिया के बोध के लिये प्रयुक्त होता है। प्रत्येक मनोवृत्ति के तीन पहलू हैं—ज्ञानात्मक, वेदनात्मक और क्रियात्मक। ये तीनों पहलू एक-दूसरे से अलग नहीं किये जा सकते हैं। मनुष्य को जो कुछ ज्ञात होता है, उसके साथ-साथ वेदना और क्रियात्मक भाव की भी अनुभूति होती है। ज्ञानात्मक मनोवृत्ति के संवेदन, प्रत्यक्षीकरण, स्मरण, कल्पना और विचार—ये पाँच भेद हैं। संवेदनात्मक के संवेग, उमंग, स्थायीभाव और भावनाग्रन्थि-ये चार भेद एवं क्रियात्मक मनोवृत्ति के सहज क्रिया, मूलवृत्ति, आदत, इच्छित क्रिया और चरित्र-ये पाँच भेद किये गये हैं। णमोकार मन्त्र के स्मरण से ज्ञानात्मक मनोवृत्ति उत्तेजित होती है, जिससे उसके अभिन्नरूप में सम्बद्ध रहने वाली उमंग वेदनात्मक अनुभूति और चरित्र नामक क्रियात्मक अनुभूति को उत्तेजना मिलती है। अमिप्राय यह है कि मानव मस्तिष्क में ज्ञानवाही और क्रियावाही—दो प्रकार की नाड़ियाँ होती हैं। इन दोनों नाड़ियों का आपस में सम्बन्ध होता है, परन्तु इन दोनों के केन्द्र पृथक् हैं। ज्ञानवाही नाड़ियाँ और मस्तिष्क के ज्ञानकेन्द्र मानव के ज्ञान विकास में एवं क्रियावाही नाड़ियाँ और मानव मस्तिष्क के क्रियाकेन्द्र उसके चरित्र के विकास की वृद्धि के लिये कार्य करते हैं। क्रियाकेन्द्र और ज्ञानकेन्द्र का घनिष्ठ सम्बन्ध होने के कारण णमोकार मन्त्र की आराधना, स्मरण और चिन्तन से ज्ञानकेन्द्र और क्रियाकेन्द्रों का समन्वय होने से मानव मन सुदृढ़ होता है और आत्मिक विकास की प्रेरणा मिलती है।

मनुष्य का चरित्र उसके स्थायी भावों का समुच्चय मात्र है। जिस मनुष्य के स्थायी भाव जिस प्रकार के होते हैं, उसका चरित्र भी उसी प्रकार का होता है। मनुष्य का परिमार्जित और आदर्श स्थायी भाव ही हृदय की अन्य प्रवृत्तियों का नियन्त्रण करता है। जिस मनुष्य के स्थायीभाव सुनियन्त्रित नहीं अथवा जिसके मन उच्चावर्षों के प्रति श्रद्धास्पद स्थायीभाव नहीं है, उसका व्यक्तित्व सुगठित तथा चरित्र सुन्दर नहीं हो सकता है। दृढ़ और सुन्दर चरित्र

बनाने के लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य के मन में उच्चादर्शों के प्रति श्रद्धास्पद स्थायीभाव हों तथा उसके अन्य स्थायी भाव उसी स्थायीभाव के द्वारा नियंत्रित हों। स्थायीभाव ही मानव के अनेक प्रकार के विचारों के जनक होते हैं। इन्हीं के द्वारा मानव की समस्त क्रियाओं का संचालन होता है। उच्च आदर्शजन्य स्थायीभाव और विवेक-इन दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। कभी-कभी विवेक को छोड़कर स्थायी भावों के अनुसार ही जीवनक्रियाएँ सम्पन्न की जाती हैं, जैसे विवेक के मना करने पर भी श्रद्धावश धार्मिक प्राचीन कृत्यों में प्रवृत्ति का होना तथा किसी से झगड़ा हो जाने पर उसकी झूठी निन्दा सुनने की प्रवृत्ति होना। इन कृत्यों में विवेक साथ नहीं है, केवल स्थायीभाव ही कार्य कर रहा है। विवेक मानव को क्रियाओं को रोक या मोड़ सकता है, उससे स्वयं क्रियाओं के संचालन की शक्ति नहीं है। अतएव आचरण को परिमार्जित और विकसित करने के लिए केवल विवेक प्राप्त करना ही आवश्यक नहीं है, बल्कि आवश्यक है उसके स्थायी भाव को योग्य और दृढ़ बनाना।

व्यक्ति के मन में जब तक किसी सुन्दर आदर्श के प्रति या किसी महान व्यक्ति के प्रति श्रद्धा और प्रेम के स्थायी भाव नहीं, तब तक दुराचार से हटकर सदाचार में उनकी प्रवृत्ति नहीं हो सकती है। ज्ञान की मात्र जानकारी से दुराचार नहीं रोका जा सकता है, इसके लिए उच्च आदर्श के प्रति श्रद्धा भावना का होना अनिवार्य है। णमोकार मन्त्र ऐसा पवित्र उच्च आदर्श है, जिससे सुदृढ़ स्थायी भाव की उत्पत्ति होती है। अतः णमोकारमन्त्र का मनपर जब बार-बार प्रभाव पड़ेगा अर्थात् अधिक समय तक इस महामन्त्र की भावना जब मन में बनी रहेगी, तब स्थायी भावों में परिष्कार हो ही जायेगा और ये ही नियन्त्रित स्थायी भाव मानव के चरित्र के विकास में सहायक होंगे।

इस महामन्त्र के मनन, स्मरण, चिन्तन और ध्यान में अजित भावों से स्थायी रूप से स्थित कुछ संस्कारों जिनमें अधिकांश विषय-कषाय सम्बन्धी ही होते हैं—में परिवर्तन होता है। मंगलमय आत्माओं के स्मरण से मन पवित्र होता है और पुरातन प्रवृत्तियों में शोधन होता है, जिससे सदाचार व्यक्ति के जीवन में आता है। उच्च आदर्श से उत्पन्न स्थायी भाव के अभाव में ही व्यक्ति दुराचार की ओर प्रवृत्त होता है। अतएव मनोविज्ञान स्पष्ट रूप से कहता है कि मानसिक उद्वेग, वासना एवं मानसिक विकार उच्च आदर्श के प्रति श्रद्धा के अभाव में दूर नहीं किये जा सकते हैं। विकारों को अधीन करने की प्रतिक्रिया का वर्णन करते हुए कहा गया है कि परिणाम-नियम, अभ्यास नियम और तत्परता-नियम के द्वारा उच्चादर्श को प्राप्त कर विवेक और आचरण को दृढ़ करने से ही मानसिक विकार और सहज पाशविक प्रवृत्तियाँ दूर की जा सकती हैं। णमोकार मन्त्र के परिणाम-नियम का अर्थ यह है कि इस मन्त्र की आराधना कर व्यक्ति जीवन में सन्तोष की भावना को जाग्रत करे तथा समस्त सुखों का केन्द्र इसी को समझे। अभ्यास-नियम का तात्पर्य है कि इस मन्त्र का मनन, चिन्तन, और स्मरण निरन्तर करता जाये। यह सिद्धान्त है कि जिस योग्यता को अपने भीतर प्रकट करना हो, उस योग्यता का बार-बार चिन्तन, स्मरण किया जाये। प्रत्येक व्यक्ति का चरम लक्ष्य ज्ञान, दर्शन, सुख और वीर्यरूप शुद्ध आत्मशक्ति को प्राप्त करना है। यह शुद्ध अमूर्तिक रत्नत्रय स्वरूप सच्चिदानन्द आत्मा ही प्राप्त करने योग्य है, अतएव रत्नत्रयस्वरूप पंचपरमेष्ठी वाचक णमोकार महामन्त्र का अभ्यास करना परम आवश्यक है। इस मन्त्र के अभ्यास द्वारा शुद्ध आत्मस्वरूप में तत्परता के साथ प्रवृत्ति करना जीवन में तत्परता नियम में उतरना है। मनुष्य में अनुकरण की प्रधान प्रवृत्ति पायी जाती है, इसी प्रवृत्ति के कारण पंचपरमेष्ठी का आदर्श सामने रखकर उनके अनुकरण से व्यक्ति अपना विकास कर सकता है।

मनोविज्ञान मानता है कि मनुष्य में भोजन ढूँढना, भागना, लड़ना, उत्सुकता, रचना, संग्रह, विकर्षण, शरणागत होना, काम प्रवृत्ति, शिशुरक्षा, दूसरों की चाह, आत्म-प्रकाशन, विनीतता और हंसना—ये चौदह मूल प्रवृत्तियाँ पायी जाती हैं। इनका अस्तित्व संसार के सभी प्राणियों में पाया जाता है। पर मनुष्य की मूल प्रवृत्तियों में यह विशेषता है कि मनुष्य इनमें समुचित परिवर्तन कर लेता है। केवल मूल प्रवृत्तियों द्वारा संचालित जीवन असम्य और पाशविक

कहलायेगा। अतः मूल प्रवृत्तियों में दमन, विलयन, मार्गान्तरीकरण और शोधन—ये चार परिवर्तन होते रहते हैं। प्रत्येक मूल प्रवृत्ति का बल उसके बराबर प्रकाशित होने से बढ़ता है। यदि किसी मूल प्रवृत्ति के प्रकाशन पर कोई नियन्त्रण नहीं रखा जाता है, तो वह मनुष्य के लिये बामकारी न बनकर हानिप्रद हो जाती है। अतः दमन की क्रिया होनी चाहिए। उदाहरणार्थ, यों कहा जाता है कि संग्रह की प्रवृत्ति यदि संयमित रूप में रहे, तो उससे मनुष्य के जीवन की रक्षा होती है। किन्तु जब यह अधिक बढ़जाती है, तो कृपणता और चोरी का रूप धारण कर लेती है। इसी प्रकार द्वन्द्वता या युद्ध की प्रवृत्ति प्राण-रक्षा के लिए उपयोगी है, किन्तु जब यह अधिक बढ़ जाती है तो यह मनुष्य की रक्षा न कर उसके विनाश का कारण बन जाती है। इसी प्रकार अन्य मूल प्रवृत्तियों के सम्बन्ध में भी कहा जा सकता है। अतएव जीवन को उपयोगी बनाने के लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य समय-समय पर अपनी प्रवृत्तियों का दमन करे और इन्हें अपने नियन्त्रण में रखे। व्यक्तित्व के विकास के लिए मूलप्रवृत्तियों का दमन उतना ही आवश्यक है, जितना उनका प्रकाशन। मूल प्रवृत्तियों का दमन विचार या विवेक द्वारा होता है। किसी बाह्य सत्ता-द्वारा किया गया दमन मानव जीवन के लिए हानिकारक होता है। अतः बचपन से ही णमोकार मन्त्र के आदर्श द्वारा मानव को मूल प्रवृत्तियों का दमन सरल और स्वाभाविक है। इस मन्त्र का आदर्श हृदय में श्रद्धा और दृढ़ विश्वास को उत्पन्न करता है, जिससे मूल प्रवृत्तियों का दमन करने में बड़ी सहायता मिलती है। णमोकार मन्त्र के उच्चारण, स्मरण, चिन्तन, मनन और ध्यान द्वारा मन पर इस प्रकार के संस्कार पड़ते हैं, जिससे जीवन में श्रद्धा और विवेक का उत्पन्न होना स्वाभाविक है। यतः मनुष्य का जीवन श्रद्धा और सद्बिचारों पर ही अवलम्बित है, वह श्रद्धा और विवेक को छोड़कर मनुष्य की तरह जीवित नहीं रह सकता है, अतः जीवन की मूल प्रवृत्तियों का दमन या नियन्त्रण करने के लिए महामंगल वाक्य णमोकार मन्त्र का स्मरण परम आवश्यक है। इस प्रकार के धार्मिक वाक्यों के चिन्तन से मूल प्रवृत्तियाँ नियन्त्रित हो जाती हैं तथा जन्मजात स्वभाव में परिवर्तन हो जाता है। नियन्त्रण की यह प्रवृत्ति धीरे-धीरे आती है। ज्ञानार्णव में आचार्य शुभचन्द्र ने बतलाया है कि महामंगल वाक्यों की विद्युत् शक्ति आत्मा में इस प्रकार झटका देती है, जिससे आहार, भय, मैथुन और परिग्रहजन्य संज्ञाएँ सहज में पारिष्कृत हो जाती हैं। जीवन के धरातल को उन्नत बनाने के लिए इस प्रकार मंगल वाक्यों को जीवन में उतारना परम आवश्यक है। अतएव जीवन की मूल प्रवृत्तियों के परिष्कार के लिए दमन क्रिया को प्रयोग में लाना आवश्यक है।

मूल प्रवृत्तियों के परिवर्तन का दूसरा उपाय विलयन है। यह दो प्रकार से हो सकता है—निरोध द्वारा और विरोध द्वारा। निरोध का तात्पर्य है कि प्रवृत्तियों को उत्तेजित होने का ही अवसर न देना। इससे मूल प्रवृत्तियाँ कुछ समय में नष्ट हो जाती हैं। विलियम जेम्स का कथन है कि यदि किसी प्रवृत्ति को अधिक काल तक प्रकाशित होने का अवसर न मिले तो वह नष्ट हो जाती है। अतः धार्मिक आस्था द्वारा व्यक्ति अपनी विकार प्रवृत्तियों को अवरोध कर उन्हें नष्ट कर सकता है। दूसरा उपाय विरोध द्वारा प्रवृत्तियों के विलयन के लिए कहा गया है, उसका अर्थ है कि जिस समय एक प्रवृत्ति कार्य कर रही हो, उसी समय उसके विपरीत दूसरी प्रवृत्ति को उत्तेजित होने देना। ऐसा करने से दो पारस्परिक विरोधी प्रवृत्तियों के एक साथ उभड़ने से दोनों का बल घट जाता है। इस तरह दोनों के प्रकाशन की रीति में अन्तर हो जाता है अथवा दोनों शान्त हो जाती हैं। जैसे द्वन्द्व प्रवृत्ति के उभड़ने पर यदि सहानुभूति की प्रवृत्ति उभाड़ दी जाये तो उक्त प्रवृत्ति का विलयन सरलता से हो जाता है। णमोकार मन्त्र का स्मरण इस दिशा में भी सहायक सिद्ध होता है। इस शुभ प्रवृत्ति के उत्पन्न होने से अन्य प्रवृत्तियाँ सहज में विलीन की जा सकती हैं।

मूल प्रवृत्ति के परिवर्तन का तीसरा उपाय मार्गान्तरीकरण है। यह उपाय दमन और विलयन के उपाय से श्रेष्ठ है। मूल प्रवृत्ति के दमन से मानसिक शक्ति संचित होती है, जब तक इस संचितशक्ति का उपयोग नहीं किया

जाये, तब तक यह हानिकारक भी सिद्ध हो सकती है। णमोकार मन्त्र का स्मरण इस प्रकार का अमोघ अस्त्र है, जिसके द्वारा बचपन से ही व्यक्ति अपनी मूल प्रवृत्तियों का मार्गान्तरीकरण कर सकता है। चिन्तन करने की प्रवृत्ति मनुष्य में पायी जाती है। यदि मनुष्य इस चिन्तन की प्रवृत्ति में विकारी भावनाओं को स्थान नहीं दे और इस प्रकार के मंगल वाक्यों का ही चिन्तन करे, तो चिन्तन प्रवृत्ति का यह सुन्दर मार्गान्तरीकरण है। यह सत्य है कि मनुष्य का मस्तिष्क निरर्थक नहीं रह सकता है, उसमें किसी न किसी प्रकार के विचार अवश्य आवेंगे। अतः चरित्र भ्रष्ट करने वाले विचारों के स्थान पर चरित्र वर्धक विचारों को स्थान दिया जाये, तो मस्तिष्क की क्रिया भी चलती रहेगी तथा शुभ प्रभाव भी पड़ता जायेगा।

ज्ञानार्णव में शुभचन्द्राचार्य ने बतलाया है कि समस्त कल्पनाओं को दूर करके अपने चैतन्य और आनन्दमय स्वरूप में लीन होना, निश्चय रत्नत्रय की प्राप्ति का स्थान है। जो इस विचार में लीन रहता है कि मैं नित्य आनन्दमय हूँ, शुद्ध हूँ, चैतन्य स्वरूप हूँ, सनातन हूँ, परमज्योति ज्ञान प्रकाश रूप हूँ, अद्वितीय हूँ, उत्पाद-व्यय-ध्रुव्य सहित हूँ, वह व्यक्ति व्यर्थ के विचारों से अपनी रक्षा करता है, पवित्र विचार या ध्यान में अपने को लीन रखता है।

मूल प्रवृत्तियों के परिवर्तन का चौथा उपाय साधन है जो प्रवृत्ति अपने अपरिवर्तित रूप में निन्दनीय कर्मों में प्रकाशित होती है, वह शोषित रूप में प्रकाशित होने पर श्लाघनीय हो जाती है। वास्तव में मूलवृत्ति का शोधन उसका एक प्रकार से मार्गान्तरीकरण है। किसी मन्त्र या मंगलवाक्य का चिन्तन आत्त और रौद्र ध्यान से हटाकर धर्मध्यान में स्थित करता है। अतः धर्मध्यान के प्रधान कारण णमोकार मन्त्र के स्मरण और चिन्तन की परम आवश्यकता है।

उपर्युक्त मनोवैज्ञानिक विवेचन का अभिप्राय यह है कि णमोकार मन्त्र के द्वारा कोई भी व्यक्ति अपने मन को प्रभावित कर सकता है। यह मन्त्र मनुष्य के चेतन, अवचेतन और अचेतन-तीनों प्रकार के मनो को प्रभावित कर अचेतन और अवचेतन मन पर सुन्दर स्थायी भाव का ऐसा संस्कार डालता है, जिससे मूल प्रवृत्तियों का परिष्कार हो आता है। अचेतन मन में वासनाओं को अर्जित होने का अवसर नहीं मिल पाता। इस मन्त्र की आराधना में ऐसी विद्युत शक्ति है जिससे इसके स्मरण से व्यक्ति का अन्तर्द्वन्द्व शान्त हो जाता है, नैतिक भावनाओं का उदय होता है, जिससे अनैतिक वासनाओं का दमन होकर नैतिक संस्कार उत्पन्न होते हैं। आभ्यन्तर में उत्पन्न विद्युत बाहर और भीतर में इतना प्रकाश उत्पन्न करती है जिससे वासनात्मक संस्कार भस्म हो जाते हैं और ज्ञान का प्रकाश व्याप्त हो जाता है। इस मन्त्र के निरन्तर उच्चारण, स्मरण और चिन्तन से आत्मा को एक प्रकार की शक्ति उत्पन्न होती है, जिसे आज की भाषा में विद्युत कह सकते हैं। इस शक्ति द्वारा आत्मा का शोधन कार्य तो किया ही जाता है, साथ ही इससे अन्य आश्चर्यजनक कार्य भी सम्पन्न किये जा सकते हैं।*



* डा० नेमचंद्र शास्त्री कृत 'णमोकार मन्त्र: एक अनुचिन्तन' से संक्षेपित।